डाउनलोड मुद्रण

अ+ अ-

व्यंग्य

श्रीमती गजानंद शास्त्रिणी

सूर्यकांत त्रिपाठी निराला

श्रीमती गजानन्द शास्त्रिणी श्रीमान् पं. गजानन्द शास्त्री की धर्मपत्नी हैं। श्रीमान् शास्त्री जी ने आपके साथ यह चौथी शादी की है, धर्म की रक्षा के लिए। शास्त्रिणी के पिता को षोडशी कन्या के लिए पैंतालीस साल का वर बुरा नहीं लगा, धर्म की रक्षा के लिए। वैद्य का पेशा अख्यितार किए शास्त्री जी ने युवती पत्नी के आने के साथ 'शास्त्रिणी' का साइन-बोर्ड टाँगा, धर्म की रक्षा के लिए। शास्त्रिणी जी उतनी ही उम्र में गहन पातिव्रत्य पर अविराम लेखनी चलाने लगीं, धर्म की रक्षा के लिए। मुझे यह कहानी लिखनी पड़ रही है, धर्म की रक्षा के लिए।

इससे सिद्ध है, धर्म बहुत ही व्यापक है। सूक्ष्म दृष्टि से देखने वालों का कहना है कि नश्वर संसार का कोई काम धर्म के दायरे से बाहर नहीं। संतान पैदा होने के पहले से मृत्यु के बाद पिंडदान तक जीवन के समस्त भविष्य, वर्तमान और भूत को व्याप्त कर धर्म-ही-धर्म है।

जितने देवता हैं, चूँकि देवता हैं, इसलिए धर्मात्मा हैं। मदन को भी देवता कहा है। यह जवानी के देवता हैं। जवानी जीवनभर का शुभ मुहूर्त है, सबसे पुष्ट, कर्मठ और तेजस्वी सम्मान्य, फलत: क्रियाएं भी सबसे अधिक महत्वपूर्ण, धार्मिकता लिए हुए। मदन को कोई देवता न माने तो न माने पर यह निश्चय है कि आज तक कोई देवता इन पर प्रभाव न डाल सका। किसी धर्म, शास्त्र और अनुशासन के मानने वालों ने ही इनकी अनुवर्तिता की है। यौवन को भी कोई कितना निंद्य कहे, चाहते सब हैं, वृद्ध सर्वस्व भी स्वाहा कर। चिह्न तक लोगों को प्रिय हैं - खिजाब की कितनी खपत! धातु-पुष्टि की दवा सबसे ज्यादा बिकती है। साबुन, सेंट, पाउडर, क्रीम, हेजलीन, वेसलीन, तेल-फुलेल के लाखों कारखानें हैं और इस दरिद्र देश में। जब न थे, रामजी और सीताजी उबटन लगाते थे। नाम और प्रसिद्धि कितनी है - संसार के सिनेमा-स्टारों को देख जाइए। किसी शहर में गिनिए - कितने सिनेमा-हाउस हैं। भीड़ भी कितनी - आवारागर्द मवेशी काइन्ज हाउस में इतने न मिलेंगे। देखिए - हिंदू, मुसलमान, सिख, पारसी, जैन, बौद्ध, क्रिस्तान, सभी; साफा, टोपी, पगड़ी, कैप, हैट और पाग से लेकर नंगा सिर - घुटना तक, अद्वैतवादी, विशिष्टतावादी, द्वैतवादी, द्वैताद्वैतवादी, शुद्धाद्वैतवादी, साम्राज्यवादी, आतंकवादी, समाजवादी, काजी, सूफी से लेकर छायावादी तक; खड़े-बेड़े, सीधे-टेढ़े सब तरह के तिलक-त्रिपुंड; बुरकेवाली, घूंघटवाली, पूरे और आधे और चौथाई बाल वाली, खुली और मुंदी चश्मेवाली आंखें तक देख रही हैं। अर्थात संसार के जितने धर्मात्मा हैं, सभी यौवन से प्यार करते हैं। इसलिए उसके कार्य को भी धर्म कहना पड़ता है। किसी के न कहने, न मानने से वह अधर्म नहीं होता।

अस्तु, इस यौवन के धर्म की ओर शास्त्रिणी जी का धावा हुआ, जब वे पंद्रह साल की थीं अविवाहिता। यह आवश्यक था, इसलिए पाप नहीं। मैं इसे आवश्यकतानुसार ही लिखूंगा। जो लोग विशेष रूप से समझना चाहते हों, वे जितने दिन तक पढ़ सकें, काम-विज्ञान का अध्ययन कर लें। इस शास्त्र पर जितनी पुस्तकें हैं, पूर अध्ययन के लिए पूरा मनुष्य-जीवन थोड़ा है। हिंदी में अनेक पुस्तकें इस पर प्रकाशित हैं, बल्कि प्रकाशन को सफल बनाने के लिए इस विषय की पुस्तकें आधार मानी गई हैं। इससे लोगों को मालूम होगा कि यह धर्म किस अवस्था से किस अवस्था तक किस-किस रूप में रहता है।

शास्त्रिणी जी के पिता जिला बनारस के रहने वाले हैं, देहात के, प्रयासी, सरयूपारीण ब्राह्मण; मध्यमा तक संस्कृत पढ़े; घर के साधारण जमींदार, इसलिए आचार्य भी विद्वता का लोहा मानते हैं। गांव में एक बाग कलमी लंगड़े का है। हर साल भारत-सम्राट को आम भेजने का इरादा करते हैं, जब से वायुयान-कंपनी चली। पर नीचे से ऊपर को देखकर ही रह जाते हैं, सांस छोड़कर। जिले के अंग्रेज हाकिमों को आम पहुंचाने की पितामह के समय से प्रथा है। ये भी सनातन धर्मानुयायी हैं। नाम पं. रामखेलावन है।

रामखेलावन जी के जीवन में एक सुधार मिलता है। अपनी कन्या का, जिन्हें हम शास्त्रिणी जी लिखते हैं, नाम उन्होंने सुपर्णा रखा है। गांव की जीभ में इसका रूप नहीं रह सका; प्रोग्रसिव राइटर्स की साहित्यिकता की तरह 'पन्ना' बन गया है। इस सुधार के लिए हम पं. रामखेलावन जी को धन्यवाद देते हैं। पंडित जी समय काटने के विचार से आप ही कन्या को शिक्षा देते थे, फलस्वरूप कन्या भी उनके साथ समय काटती गई और पंद्रह साल की अवस्था तक सारस्वत में हिलती रही। फिर भी गांव की वधू-वनिताओं पर, उसकी विद्वता का पूरा प्रभाव पड़ा। दूसरों पर प्रभाव डालने का उसका जमींदारी स्वभाव था, फिर संस्कृत पढ़ी, लोग मानने लगे। गति में चापल्य उसकी प्रतिभा का सबसे बड़ा लक्षण था।

उन दिनों छायावाद का बोलबाला था, खास तौर से इलाहाबाद में लड़के पन्त के नाम का माला जपते थे। ध्यान लगाए कितनी लड़ाइयां लड़ीं प्रसाद, पन्त और माखनलाल के विवेचन में। भगवतीचरण बायरन के आगे हैं, पीछे रामकुमार, कितनी ताकत से सामने आते हुए। महादेवी कितना खीचती हैं।

मोहन उसी गांव का इलाहाबाद विश्वविद्यालय में बी.ए. (पहले साल) में पढ़ता था। यह रंग उस पर भी चढ़ा और दूसरों से अधिक। उसे पन्त की प्रकृति प्रिय थी, और इस प्रियता से जैसे पन्त में बदल जाना चाहता था। संकोच, लज्जा, मार्जित मधुर उच्चारण, निर्भिक नम्रता, शिष्ट अलाप, सजधज उसी तरह। रचनाओं से रच गया। साधना करते सधी रचना करने लगा। पर सम्मेलन शरीफ अब तक नहीं गया। पिता हाई कोर्ट में क्लर्क थे। गर्मी की छुट्टियों में गांव आया हुआ है।

सुपर्णा से परिचय है जैसे पर्ण और सुमन का। सुमन पर्ण के ऊपर है, सुपर्णा नहीं समझी। जमींदार की लड़की, जिस तरह वहां की समस्त डालों के ऊपर अपने को समझती थी, उसके लिए भी समझी। ज्यों-ज्यों समय की हवा से हिलती थी, सुमन की रेणु से रंग जाती थी; वह उसी का रंग है। मोहन शिष्ट था, पर अपना आसन न छोड़ता था।

सुपर्णा एक दिन बाग में थी। मोहन लौटा हुआ घर आ रहा था। सुपर्णा रंग गई। बुलाया। मोहन फिर भी घर की तरफ चला।

'मोहन! ये आम बाबूजी दे गए हैं, ले जाओ। तकवाहा बाजार गया है।'

मोहन बाग की ओर चला। नजदीक गया तो सुपर्णा हंसने लगी, 'कैसा धोखा देकर बुलाया है? - आम बाबूजी ने तुम्हारे यहां कभी और भिजवाए हैं? मोहन लजाकर हंसने लगा।

'लेकिन तुम्हारे लिए कुछ आम चुनकर मैंने रखे हैं। चलो।'

मोहन ने एक बार संयत दृष्टि से उसे देखा। सुपर्णा साथ लिए बीच बाग की तरफ चली, 'मैंने तुम्हें आते देखा था, तुमसे मिलने को छिपकर चली आई। तकवाहे को सौदा लेने बाजार (दूसरे गांव) भेज दिया है। याद है मोहन ?'

'क्या?'

'मेरी गुड़ंइयों ने तुम्हारे साथ, खेल में।'

'वह तो खेल था।'

'नहीं वह सही था। मैं अब भी तुम्हें वही समझती हूं।'

'लेकिन तुम पयासी हो। शादी तुम्हारे पिता को मंजूर न होगी।'

'तो तुम मुझे कहीं ले चलो। मैं तुमसे कहने आई हूं। दूसरे से ब्याह करना मैं नहीं चाहती।'

मोहन की सुंदरता गांव की रहने वाली सुपर्णा ने दूसरे युवक में नहीं देखी। उसका आकर्षण उसकी मां को मालूम हो चुका था। उसका मोहन के घर जाना बंद था। आज पूरी शक्ति लड़ाकर, मौका देखकर मोहन से मिलने आई है। मोहन खिंचा। उसे वहां वह प्रेम न दिखा, वह जिसका भक्त था, कहा -

'लेकिन मैं कहां ले चलूं?'

'जहां रहते हो।'

'वहां तो पिताजी हैं।'

'तो और कहीं।'

'खाएंगे क्या?'

खाना पड़ता है, यह सुपर्णा को याद न था। मोहन से लिपटी जा रही थी। इसी समय तकवाहा बाजार से आ गया था। देखकर सचेत करने के लिए आवाज दी। सुपर्णा घबराई। मोहन खड़ा हो गया।

तकवाहा बाग आ सौदा देकर मोहन को जमींदार की ही दृष्टि से घूरता रहा। मतलब समझकर मोहन धीरे-धीरे बाग से बाहर निकला और घर की ओर चला।

तकवाहा धार्मिक था। जैसा देखा था, पं. रामखेलावन जी से व्याख्या समेत कहा। साथ ही इतना उपदेश भी दिया कि मालिक! पानी की भरी खाल है, कल क्या हो जाए! बिटिया रानी का जल्द से ब्याह कर देना चाहिए।

पं. रामखेलावन जी भी धार्मिक थे। धर्म की सूक्ष्मतम दृष्टि से देखने लगे तो मालूम पड़ा कि सुपर्णा के गर्भ है, नौ-दस महीने में लड़का होगा। फिर? इस महीने लगन है - ब्याह हो जाना चाहिए।

जल्दी में बनारस चले।

पं. गजानन्द शास्त्री बनारस के बैद्य हैं। वैदकी साधारण चलती है, बड़े दांव-पेंच करते हैं तब। पर आशा बहुत बढ़ी-चढ़ी है। सदा बड़े-बड़े आदमियों की तारीफ करते हैं और ऐस स्वर से, जैसे उन्हीं में ऐ एक हों। वैदकी चले इस अभिप्राय से शाम को रामायण पढ़ते-पढ़वाते हैं तुलसी कृत; अर्थ स्वयं कहते हैं। गोस्वामी जी के साहित्य का उनसे बड़ा जानकार - विशेषकर रामायण का, भारतवर्ष में नहीं, यह श्रद्धापूर्वक मानते हैं। सुनने वाले ज्यादातर विद्यार्थी हैं, जो भरसक गुरु के यहां भोजन करके विद्याध्ययन करने काशी आते हैं। कुछ साधारण जन हैं, जिन्हें असमय पर मुफ्त दवा की जरूरत पड़ती है। दो-चार ऐसे भी आदमी, जो काम तो साधारण करते हैं, पर असाधारण आदमियों में गप लड़ाने के आदी हैं। मजे की महफिल लगती है। कुछ महीने हुए, शास्त्री जी की तीसरी पत्नी का असच्चिकित्सा के कारण देहांत हो गया है। बड़े आदमी की तलाश में मिलने वाले अपने मित्रों से शास्त्री जी बिना पत्नी वाली अड़चनों का बयान करते हैं, और उतनी बड़ी गृहस्थी आठाबाठा जाती है - इसके लिए विलाप। सुपात्र सरयूपारीण ब्राह्मण हैं; मामखोर सुकुल।

पं. रामखेलावन जी बनारस में एक ऐसे मित्र के यहां आकर ठहरे, जो वैद्य जी के पूर्वोक्त प्रकार के मित्र हैं। रामखेलावन जी लड़की के ब्याह के लिए आए हैं, सुनकर मित्र ने उन्हें ऊपर ही लिया, और शास्त्री जी की तारीफ करते हुए कहा, 'सुपात्र बनारस शहर में न मिलेगा। शास्त्री जी की तीसरी पत्नी अभी गुजरी हैं; फिर भी उम्र अभी अधिक नहीं, जवान हैं।' शास्त्री, वैद्य, सुपात्र और उम्र भी अधिक नहीं - सुनकर पं. रामखेलावन जी ने मन-ही-मन बाबा विश्वनाथ को दंडवत की और बाबा विश्वनाथ ने हिंदू-धर्म के लिए क्या-क्या किया है, इसका उन्हें स्मरण दिलाया - वे भक्तवत्सल आशुतोष हैं, यह यहीं से विदित हो रहा है - मर्यादा की रक्षा के लिए अपनी पुरी में पहले से वर लिए बैठे हैं - आने के साथ मिला दिया। अब यह बंधन न उखड़े, इसकी बाबा विश्वनाथ को याद दिलाई।

पं. रामखेलावन जी के मित्र पं. गजानन्द शास्त्री के यहां उन्हें लेकर चले। जमींदार पर एक धाक जमाने की सोची; कहा, 'लेकिन बड़े आदमी हैं, कुछ लेन-देन वाली पहले से कह दीजिए, आखिर उनकी बराबरी के लिए कहना ही पड़ेगा कि जमींदार हैं।'

'जैसा आप कहें।'

'कुल मिलाकर तीन हजार तो दीजिए, नहीं तो अच्छा न लगेगा।'

'इतना तो बहुत है।'

'ढाई हजार? इतने से कम में न होगा। यह दहेज की बात नहीं, बनाव की बात है।'

'अच्छा, इतना कर दिया जाएगा। लेकिन विवाह इसी लगन में हो जाना चाहिए।'

'मित्र चौंका। संदेह मिटाने के लिए कहा, 'भई, इस साल तो नहीं हो सकता।'

पं. रामखेलावन जी घबराकर बोले, 'आप जानते ही हैं ग्यारह साल के बाद लड़की जितना ही पिता के यहां रहती है, पिता पर पाप चढ़ता है। पंद्रह साल की है। सुंदर जोड़ी है। लड़की अपने घर जाए, चिंता कटे। जमाना दूसरा है।'

मित्र को आशा बंधी। सहानुभूतिपूर्वक बोले, 'बड़ा जोर लगाना पड़ेगा, अगले साल हो तो बुरा तो नहीं?'

पं. रामखेलावन जी चलते हुए रुककर बोले, 'अब इतना सहारा दिया है, तो खेवा पार ही कर दीजिए। बड़े आदमी ठहरे, कोई हमसे भी अच्छा तब तक आ जाएगा।'

मित्र को मजबूती हुई। बोले, 'उनकी स्त्री का देहांत हुआ है, अभी साल भी पूरा नहीं हुआ। बरखी से पहले मंजूर न करेंगे। लेकिन एक उपाय है, अगर आप करें।'

'आप जो भी कहें, हम करने को तैयार हैं, भला हमें ऐसा दामाद कहां मिलेगा?'

'बात यह कि कुल सराधें एक ही महीने में करवानी पड़ेगीं, और फिर ब्रह्मभोज भी तो है, और बड़ा। कम-से-कम तीन हजार खर्च होंगे। फिर तत्काल विवाह। आप तीन हजार रुपए भी दीजिए। पर उन्हें नहीं। अरे रे! - इसे वे अपमान समझेंगे। हम दें। इससे आपकी इज्जत बढ़ेगी, और आखिर हमें बढ़कर उनसे कहना भी तो है कि बराबर की जगह है? हजार जब उनके हाथ पर रखेंगे कि आपके ससुरजी ने बरखी के खर्च के लिए दिए हैं, तब यह दस हजार के इतना होगा, यही तो बात थी। वे भी समझेंगे।'

पं. रामखेलावन जी दिल से कसमसाए, पर चारा न था। उतरे गले से कहा, 'अच्छा बात है।' मित्र ने कहा, 'तो रुपए कब तक भेजिएगा? अच्छा, अभी चलिए : देख तो लीजिए, विवाह की बातचीत न कीजिएगा, नहीं तो निकाल ही देंगे। समझिए - पत्नी मरी हैं।'

रामखेलावन दबे। धीरे-धीरे चलते गए। 'लड़की कुछ पढ़ी भी है? पढ़ती थी - तीन साल हुए, जब मैं गया था, गवाही थी - मौका देखने के लिए?' मित्र ने पूछा।

'लड़की तो सरस्वती है। आपने देखा ही है। संस्कृत पढ़ी है।'

'ठीक है। देखिए, बाबा विश्वनाथ हैं।' मित्र की तरह पर उतरे गले से कहा।

रामखेलावन जी डरे कि बिगाड़ न दे। दिल से जानते थे, बदमाश है, उनकी तरफ से झूठ गवाही दे चुका है रुपए लेकर; लेकिन लाचार थे; कहा, 'हम तो आपमें बाबा विश्वनाथ को ही देखते हैं। यह काम आपका बनाया बनेगा।'

मित्र हंसा। बोला, 'कह तो चुके। गाढ़े में काम न दे, वह मित्र नहीं, दुश्मन है।' सामने देखकर, 'वह शास्त्री जी का ही मकान है, सामने।' था वह किराये का मकान। अच्छी तरह देखकर कहा, 'हैं नहीं बैठक में; शायद पूजा में हैं।'

दोनों बैठक में गए। मित्र ने पं. रामखेलावन जी को आश्वासन देकर कहा, 'आप बैठिए। मैं बुलाए लाता हूं।'

पं. रामखेलावन जी एक कुर्सी पर बैठे। मित्रवर आवाज देते हुए जीने पर चढ़े।

जिस तरह मित्र ने यहां रोब गांठा था, उसी तरह शास्त्री जी पर गांठना चाहा। वह देख चुका था, शास्त्री खिजाब लगाते हैं, अर्थ - विवाह के सिवा दूसरा नहीं। शास्त्री जी बढ़-चढ़कर बातें करते हैं, यह मौका बढ़कर बातें करने का है। उसका मंत्र है, काम निकल जाने पर बेटा बाप का नहीं होता। उसे काम निकालना है।

शास्त्री जी ऊपर एकांत में दवा कूट रहे थे। आवाज पहचानकर बुलाया। मित्र ने पहुंचने के साथ देखा - खिजाब ताजा है। प्रसन्न होकर बोला, 'मेरी मानिए, तो वह ब्याह कराऊं, जैसा कभी किया न हो, और बहू अप्सरा, संस्कृत पढ़ी, रुपया भी दिलाऊं।'

शास्त्री जी पुलकित हो उठे। कहा, 'आप हमें दूसरा समझते हैं? - इतनी मित्रता रोज की उठक-बैठक, आप मित्र ही नहीं - हमारे सर्वस्व हैं। आपकी बात न मानेंगे तो क्या रास्ता-चलते की मानेंगे? - आप भी !'

'आपने अभी स्नान नहीं किया शायद? नहाकर चंदन लगाकर अच्छे कपड़े पहनकर नीचे आइए। विवाह करने वाले जमींदार साहब हैं। वहीं परिचय कराऊंगा। लेकिन अपनी तरफ से कुछ कहिएगा मत। नहीं तो, बड़ा आदमी है, भड़क जाएगा। घर की शेखी में मत भूलिएगा। आप जैसे उसके नौकर हैं। हां, जन्म-पत्र अपना हरगिज न दीजिएगा। उम्र का पता चला तो न करेगा। मैं सब ठीक कर दूंगा। चुपचाप बैठे रहिएगा। नौकर कहां है?'

'बाजार गया है।'

'आने पर मिठाई मंगवाइएगा। हालांकि खाएगा नहीं। मिठाई से इंकार करने पर नमस्कार करके सीधे ऊपर का रास्ता नापिएगा। मैं भी यह कह दूंगा, शास्ती तजी ने आधे घंटे का समय दिया है।'

शास्त्री गजानन्द जी गदगद हो गए। ऐसा सच्चा आदमी यह पहला मिला है, उनका दिल कहने लगा। मित्र नीचे उतरा और मित्र से गंभीर होकर बोला, 'पूजा में हैं, मैं तो पहले ही समझ गया था। दस मिनट के बाद आंख खोली, जब मैंने घंटी टिनटिनाई। जब से स्त्री का देहांत हुआ है, पूजा में ही तो रहते हैं। सिर हिलाकर कहा - चलो। देखिए, बाबा विश्वनाथ ही हैं। हे प्रभो! शरणागत-शरण! तुम्हीं हो - बाबा विश्वनाथ!' कहते हुए मित्र ने पलकें मूंद लीं।

इसी समय पैरों की आहट मालूम थी। देखा, नौकर आ रहा था। डांटकर कहा, 'पंखा झल। शास्त्री जी अभी आते हैं।'

नौकर पंखा झलने लगा। वैद्य का बैठका था ही। पं. रामखेलावन जी प्रभाव में आ गए। आधे घंटे बाद जीने में खड़ाऊं की खटक सुन पड़ी। मित्र उठकर हाथ जोड़कर खड़ा हो गया, उंगली के इशारे पं. रामखेलावन जी को खड़े हो जाने के लिए कहकर। मित्र की देखा-देखी पंडित जी ने भी भक्तिपूर्वक हाथ जोड़ लिए। नौकर अचंभे से देख रहा था। ऐसा पहले नहीं देखा था।

शास्त्री जी के आने पर मित्र ने घुटने तक झुककर प्रणाम किया। पं. रामखेलावन जी ने भी मित्र का अनुसरण किया। 'बैठिए, गदाधर जी' कोमल सभ्य कंठ से कहकर गजानंद जी अपनी कुर्सी पर बैठ गए। वैद्यजी की बढिया गद्दीदार कुर्सी बीच में थी। पं. रामखेलावन जी आश्चर्य और हर्ष से देख रहे थे। आश्चर्य इसलिए कि शास्त्री जी बड़े आदती तो हैं ही, उम्र भी अधिक नहीं, 25 से 30 कहने की हिम्मत नहीं पड़ती।

शास्त्री जी ने नौकर को पान और मिठाई ले आने के लिए भेजा और स्वाभाविक बनावटी विनम्रता के साथ मित्रवर गदाधर ने आगंतुक अपरिचित महाशय का परिचय पूछने लगे। पं. गदाधर जी बड़े दात्त कंठ से पं. रामखेलावन जी की प्रशंसा कर चले, पर किस अभिप्राय से वे गए थे, यह न कहा। कहा, 'महाराज! आप एक अत्यंत आवश्यक गृहधर्म से मुक्त होना चाहते हैं।

पलकें मूंदते हुए, भावावेश मे, शास्त्री जी ने कहा, 'काशी तो मुक्ति के लिए प्रसिद्ध है।'

'हां, महाराज!' मित्र ने और आविष्ट होते हुए कहा, 'वह छूट तो सबसे बड़ी मुक्ति है, पर यह साधारण मुक्ति ही है, जैसे बाबा विश्वनाथ के परमसिद्ध भक्त स्वीकारमात्र से इस भव-बंधन से मुक्ति दे सकते हैं।' कहकर हाथ जोड़ दिए। पं. रामखेलावन जी ने भी साथ दिया।

हां, नहीं, कुछ न कहकर एकांत धार्मिक दृष्टि को परम सिद्ध पं. गजानन्द जी शास्त्री पलकों के अंदर करके बैठ रहे।

इसी समय नौकर पान और मिठाई ले आया। शास्त्री जी ने खटक से आंखें खोलकर देखा, नौकर को शुद्ध जल ले आने के लिए कहकर बड़ी नम्रता से पं. रामखेलावन जी को जलपान करने के लिए पूछा। पं. रामखेलावन जी दोनों हाथ उठाकर जीभ काटकर सिर हिलाते हुए बोले, 'नहीं महराज, नहीं, यह तो अधर्म है। चाहिए तो हमें कि हम आपकी सेवा करें, बल्कि आपके सेवा संबंध में सदा के लिए -'

'अहाहा! क्या कही! - क्या कही!' कहकर, पूरा दोना उठाकर एक रसगुल्ला मुंह में छोड़ते हुए मित्र ने कहा, 'बाबा विश्वनाथ जी के वर से काशी का एक-एक बालक अंतर्यामी होता है, फिर उनकी सभा के परिषद शास्त्री जी तो -"

शास्त्री जी अभिन्न स्नेह की दृष्टि से प्रिय मित्र को देखते रहे। मित्र ने, स्वल्पकाल मे रामभवन का प्रसिद्ध मिष्ठान्न उदरस्थ कर जलपान के पश्चात मगही बीड़ों की एक नत्थी मुखव्यादान कर यथा स्थान रखी। शास्त्री जी विनयपूर्वक नमस्कार कर जीना तै करने को चले। उनके पीठ फेरने पर मित्र ने रामखेलावन जी को पंजा दिखाकर हिलाते हुए आश्वासन दिया। शास्त्री जी के अदृश्य होने पर इशारे से पं. रामखेलावन जी को साथ लेकर वासस्थल की ओर प्रस्थान किया।

रामखेलावन जी के मौन पर शास्त्री जी का पूरा-पूरा प्रभाव पड़ चुका था। कहा, 'अब हमें इधर से जाने दीजिए; कल रुपए लेकर आएंगे। लेकिन इसी महीने विवाह हो जाएगा?'

'इसी महीने - इसी महीने', गंभीर भाव से मित्र ने कहा, 'जन्मपत्र लड़की का लेते आइएगा। हां, एक बात और है। बाकी डेढ़ हजार में बाहर सौ का जेवर होना चाहिए, नया; आइएगा हम खरीदवा देंगे', दलाली की सोचते हुए - कहा, 'आपको ठग लेगा। आप इतना तो समझ गए होंगे कि इतने के बिना बनता नहीं, तीन सौ रुपए रह जाएंगे। खिलाने-पिलाने और परजों को देने की बहुत है। बल्कि कुछ बच जाएगा आपके पास। फिजूल खर्च हो यह मैं नहीं चाहता। इसीलिए, ठोस-ठोस काम वाला खर्च कहा। अच्छा, नमस्कार!'

शास्त्री जी का ब्याह हो गया। सुपर्णा पति के साथ है। शास्त्री जी ब्याह करते-करते कोमल हो गए थे। नवीना सुपर्णा को यथाभ्यास सब प्रकार प्रीत रखने लगे।

बाग से लौटने पर सुपर्णा के हृदय में मोहन के लिए क्रोध पैदा हुआ। घरवालों ने सख्त निगरानी रखने के अलावा, डर के मारे उससे कुछ नहीं कहा। उसने भी विरोध किए बिना विवाह के बहाव में अपने को बहा दिया। मन में यह प्रतिहिंसा लिए हुए, कि मोहन इस बहते में मिलेगा। और उसे हो सकेगा तो उचित शिक्षा देगी। शास्त्री जी को एकांत भक्त देखकर मन में मुस्कराई।

सुपर्णा का जीवन शास्त्री जी के लिए भी जीवन सिद्ध हुआ। शास्त्री जी अपना कारोबार बढ़ाने लगे। सुपर्णा को वैदक की अनुवादित हिंदी पुस्तकें देने लगे, नाड़ी-विचार चर्चा आदि करने लगे। उस आग में तृण की तरह जल-जलकर जो प्रकाश देखने लगे, वह मर्त्य में उन्हें दुर्लभ मालूम दिया। एक दिन श्रीमती गजानन्द शास्त्रिणी के नाम से स्त्रियों के लिए बिना फीस वाला रोग परीक्षणालय खोल दिया - इस विचार से कि दवा के दाम मिलेंगे, फिर प्रसिद्धि होने पर फीस भी मिलेगी।

लेकिन ध्यान से सुपर्णा के पढ़ने का कारण कुछ और है। शास्त्री जी अपनी मेज की सजावट तथा प्रतीक्षा करते रोगियों के समय काटने के विचार से 'तारा' के ग्राहक थे। एक दिन सुपर्णा 'तारा' के पन्ने उलटने लगी। मोहन की एक रचना छिपी थी। यह उसकी पहली प्रकाशित कविता थी। विषय था 'व्यर्थ प्रणय'। बात बहुत कुछ मिलती थी। लेकिन कुछ निंदा थी - जिस प्रेस से कवि स्वर्ग से गिरा जाता है - उसकी। काव्य की प्रेमिका का उसमें वहीं प्रेम दर्शाया गया था। सुपर्णा चौंकी। फिर संयत हुई और नियमित रूप से 'तारा' पढ़ने लगी।

एक साल बीत गया। अब सुपर्णा हिंदी में मजे में लिख देती है। मोहन से उसका हाड़-हाड़ जल रहा था। एक दिन उसने पातिव्रत्य पर एक लेख लिखा। आजकल के छायावाद के संबंध में भी पढ़ चुकी थी और बहुत कुछ अपने पति से सुन चुकी थी। काशी हिंदी के सभी वादों की भूमि है। प्रसाद काशी के ही हैं। उनके युवक पाठक शिष्य अनेक शास्त्रियों को बना चुके हैं। पं. गजानन्द शास्त्री गंगा नहाते समय कई बार तर्क कर चुके हैं, उत्तर भी भिन्न मुनि के भिन्न मत की तरह अनेक मिल चुके हैं। एक दिन शास्त्री जी के पूछने पर एक ने कहा, 'छायावाद का अर्थ है शिष्टतावाद; छायावादी का अर्थ है सुंदर साफ वस्त्र और शिष्ट भाषा धारण करने वाला; जो छायावादी है, वह सुवेश और मधुरभाषी है; जो छायावादी नहीं है वह काशी के शास्त्रियों की तरह अंगोछा पहनने वाला है या नंगा है।' दूसरे दिन दो थे। नहा रहे थे। शास्त्री जी भी नहा रहे थे। 'छायावाद क्या है?' - शास्त्री जी ने पूछा। उन्होंने शास्त्री जी को गंगा में गहरे ले जाकर डुबाना शुरू किया, जब कई कुल्ले पानी पी गए, तब छोडा; शिथिल होकर शास्त्री जी किनारे आए, तब लड़कों ने कहा, 'यही है छायावाद।' फलत: शास्त्री जी छायावाद और छायावादी से मौलिक घृणा करने लगे थे और जिज्ञासु षोडशी प्रिया को समझाते रहे कि छायावाद वह है, जिसमें कला के साथ व्यभिचार किया जाता है तरह-तरह से। आइडिया के रूप में, सुपर्णा जैसी ओजस्विनी लेखिका के लिए इतना बहुत था। आदि से अंत तक उसके लेख में प्राचीन पतिव्रत धर्म और नवीन छायावादी व्यभिचार प्रचारक के कंठ से बोल रहा था। शास्त्री जी ने कई बार पढ़ा और पत्नी को सती समझकर मन-ही-मन प्रसन्न हुए। वह लेख संपादकजी के पास भेजा गया। संपादकजी लेखिका मात्र को प्रोत्साहित करते हैं ताकि हिंदी की मरुभूमि सरस होकर आबाद हो, इसलिए लेख या कविता के साथ चित्र भी छापते हैं। शास्त्रिणी जी को लिखा। प्रसिद्धि के विचार से शास्त्री जी ने एक अच्छा सा चित्र उतरवाकर भेज दिया। शास्त्रिणी जी का दिल बढ़ गया। साथ में उपदेश देने वाली प्रवृत्ति भी।

इसी समय देश में आंदोलन शुरू हुआ। पिकेटिंग के लिए देवियों की आवश्यकता हुई - पुरुषों का साथ देने के लिए भी। शास्त्रिणी जी की मारफत शास्त्री जी का व्यवसाय अब तक भी न चमका था। शास्त्री जी ने पिकेटिंग में जाने

की आज्ञा दे दी। इसी समय महात्माजी बनारस होते हुए कहीं जा रहे थे, कुछ घंटों के लिए उतरे। शास्त्री जी की सलाह से एक जेवर बेचकर, शास्त्रिणी जी ने दो सौ रुपए की थैली उन्हें भेंट की। तन, मन और धन से देश के लिए हुई इस सेवा का साधारण जनता पर असाधारण प्रभाव पड़ा। सब धन्य-धन्य कहने लगे। शास्त्रिणी जी पूरी तत्परता से पिकेटिंग करती रहीं। एक दिन पुलिस ने दूसरी स्त्रियों के साथ उन्हें भी लेकर एकांत में, कुछ मील शहर से दूर, संध्या समय छोड़ दिया। वहां से उनका मायका नजदीक था। रास्ता जाना हुआ। लड़कपन में वहां तक वे खेलने जाती थीं। पैदल मायके चली गईं। दूसरे देवियों से नहीं कहा, इसलिए कि ले जाना होगा और सबके लिए वहां सुविधा न होगी। प्रात:काल देवियों की गिनती में यह एक घटी, संवाद-पत्रों ने हल्ला मचाया। ये तीन दिन बाद विश्राम लेकर मायके से लौटीं, और शोक-संतप्त पतिदेव को और उच्छृंखल रूप से बड़बड़ाते हुए संवाद पत्रों को शांत किया - प्रतिवाद लिखा कि संपादकों को इस प्रकार अधीर नहीं होना चाहिए।

आंदोलन के बाद इनकी प्रैक्टिस चमक गई। बड़ी देवियां आने लगीं। बुलावा भी होने लगा। चिकित्सा के साथ लेख लिखना भी जारी रहा। ये बिल्कुल समय के साथ थीं। एक बार लिखा, 'देश को छायावाद से जितना नुकसान पहुंचा है, उतना गुलामी से नहीं।' इनके विचारों का आदर नीम-राजनीतिज्ञों में क्रमश: जोर पकड़ता गया। प्रोग्रेसिव राइटर्स ने भी बधाइयां दीं और इनकी हिंदी को आदर्श मानकर अपनी सभा में सम्मिलित हाने के लिए पूछा। अस्तु शास्त्रिणी जी दिन-पर-दिन उन्नति करती गईं। इस समय नया चुनाव शुरू हुआ। राष्ट्रपति ने कांग्रेस को वोट देने के लिए आवाज उठाई। हर जिले में कांग्रेस उम्मीदवार खड़े हुए। देवियां भी। वे मर्दों के बराबर हैं। शास्त्रिणी जी भी जौनपुर से खड़ी होकर सफल हुईं। अब उनके सम्मान की सीमा न रही। एम.एल.ए. हैं। 'कौशल' में उनके निबंध प्रकाशित होते थे। लखनऊ आने पर 'कौशल' के प्रधान संपादक एक दिन उनसे मिले और 'कौशल' कार्यालय पधारने के लिए प्रार्थना की। शास्त्रिणी जी ने गर्वित स्वीकारोक्ति दी।

'कौशल' कार्यालय सजाया गया। शास्त्रिणी जी पधारीं। मोहन एम.ए. होकर यहां सहकारी है, लेकिन लिखने में हिंदी में अकेला। शास्त्रिणी जी ने देखा। मोहन ने उठकर नमस्कार किया। 'आप यहां', शास्त्रिणी जी ने प्रश्न किया। 'जी हां', मोहन ने नम्रता से उत्तर दिया, 'यहां सहायक हैं।' शास्त्रिणी जी उद्धत भाव से हंसी। उपदेश के स्वर में बोलीं, 'आप गलत रास्ते पर थे!'

शीर्ष पर जाएँ